सह-अस्तित्व : एक वैचारिकी

विकास सिंह
संपादक
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास
राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
गाजीपुर

लोकनाथ पब्लिकेशन

प्रथम संस्करण : २०१९
ISBN 978-93-81123-92-8

© प्रकाशक

Email- prcbsbi@gmail.com

lnpvns@gmail.com

Website www.philosophical researchcouncil.com

मुद्रक
फिलोसोफिकल रिसर्च कौंसिल
प्रकाशक
लोकनाथ पब्लिकेशन
लखनपुर भुल्लनपुर
वाराणसी २२११०८

षडदश पुष्प

सह-अस्तित्व के प्रस्तोता कवि : कबीर

डॉ निरंजन कुमार यादव♦

मनुष्य जिस पर आश्रित रहता है उसका संरक्षण भी करता है। यह उसका मानवीय गुण है।इसी गुण के कारण वह इस धरा पर अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ है। इस चराचर जगत में सभी प्राणियों की परस्पर निर्भरता एवं उसके संरक्षण की आवश्यकता के फलस्वरूप ही सह-अस्तित्व की अवधारणा विकसित हुई है। सह-अस्तित्व का अर्थ ही होता है कि एक दूसरे के विकास में सहयोग करते हुए साथ- साथ रहना ।प्रकृति और प्राणी जगत इसके सर्वोत्तम उदाहरण हैं, किंतु मनुष्य के कभी ख़त्म न होने वाले लोभ ने सह-अस्तित्व की अवधारणा का अतिक्रमण कर दिया है। छोटे -छोटे जीव -जंतुओं एवं प्राकृतिक संसाधनों पर आज संकट आ गया है । उनके संरक्षण पर जोर दिया जा रहा है। यह सिर्फ इसलिए नहीं हो रहा है कि मनुष्य उसके प्रति दयावान हो गया है ,बल्कि यह इसलिए हो रहा है कि उसे यह ज्ञात हो गया है कि इनके उन्मूलन से उसका जीवन संकट की जद में आ रहा है। इस मुद्दे पर सरकार और जनता दोनों जागरुक हो चुके हैं। बहुत सारे गैर सरकारी संगठन इस पुनीत कार्य में लगे हुए हैं। इसमें कितनी हकीकत और कितना फसाना है ? यह तो आने वाला वक्त ही बताएगा ।

प्रकृति और मनुष्य के बीच जो सह-अस्तित्व का संकट है हम उसे प्रत्यक्ष रूप से देख -समझ रहे हैं। उस पर चर्चा परिचर्चा कर रहे हैं, किंतु मनुष्य -मनुष्य के बीच बीच भी सह-अस्तित्व का खतरा है !इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता। एक मनुष्य अपने मद में चूर होकर दूसरे मनुष्य को रौदने के लिए आमादा है। वहअपने अस्तित्व के आगे दूसरे के अस्तित्व को नकार देता है।सामंती एवं गैरमानवीय सोच वालों ने श्रेष्ठतावोध एवं हीनतावोध के कई परंपरागत व आधुनिक पैमाने बना लिए हैं और अपने को श्रेष्ठ मानने के लिए इन पैमानों का प्रयोग वह करते चले आ रहे हैं। समाज गतिशील है। मनुष्य की

♦असिस्टेंट प्रोफेसर हिन्दी, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय ,गाजीपुर

हैं, तो फिर वैर किस बात की? हिंसा किस बात की? धर्म के नाम पर लड़ाई किस बात की? हिंसा और बैर से आप और हम अपने उसी आराध्य के पुत्रों, बंदों या उसकेअंशों को कष्ट पहुंचाते हैं, तो ऐसे में खुदा या परमात्मा कैसे हम पर मेहरबान होगा? सह-अस्तित्व की अवधारणा तभी बलवती होगी जब हम अपने जैसा ही दूसरे को मानेंगे। जितने प्यारे हम ईश्वर या खुदा के लिए हैं उतने ही इस संसार का प्रत्येक प्राणी भी-

"हम तो एक एक करि जाना।
दोई कहै तिनही कौ दोजक जिन नाहिन पहचाना।।"

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य में कबीर से बड़ा सह-अस्तित्व वादी एवं मानवतावादी कोई दूसरा कवि नहीं हुआ। उन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त सह-अस्तित्व विरोधी समस्त अंधविश्वासों और रूढ़ियों तथा मिथ्या सिद्धांतों द्वारा प्रचारित सामाजिक विषमताओं का मूलोच्छेदन करने का बीड़ा उठाया और निर्भयता पूर्वक सभी पाखंडो पर प्रहार किया।उन्होंने तत्कालीन सामंतों तथा शासकों को लक्ष्य करके ऐसी अनेक बातें कही है जिससे भौतिक ऐश्वर्य पर आधारित उनके झूठे अभिमान का मूलोच्छेदन हो। सामाजिक शोषण ,अनाचार और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष में आज भी कबीर का काव्य एक तीखा अस्त्र है।कबीर से हम रूढिगत सामंती दुराचार और अन्यायी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध डटकर लड़ना सीखते हैं और यह भी सीखते हैं कि विद्रोही कवि किस प्रकार अंत तक शोषण के दुर्ग के सामने अपना माथा ऊंचा रखता है।कबीर अपने पूरे जीवन में सह-अस्तित्व के लिए "सांच ही कहत और सांच ही गहत हैं।"उनकी कविता सभी प्रकार के सह- अस्तित्व विरोधी मूल्य को ध्वस्त कर जाति, संप्रदाय के संकुचित दायरे से बाहर आने का आग्रह करती है और वह अपने साथ सबकी खैर मांगती है-

कबिरा खड़ा बाजार में, मांगे सबकी खैर।
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर।१

---

१. दास,श्यामसुंदर,'कबीर ग्रंथावली'(२००७),नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,पृष्ठ-३६।